IMPACT FACTOR 5.397 (SJIF USA)
BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed /Refereed Open Access Journal
Vol. 3, Issue 4, October-December, 2025
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/
ISSN : 3048-6971

मध्यकालीन हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीय चेतना

डॉ. दिव्या सिंह राजपुरोहित
सहायक आचार्य, हिंदी
श्री पारसमल बोहरा नेत्रहीन महाविद्यालय, चौखा, जोधपुर, राजस्थान

सारांश – भक्तिकाल में जहाँ हिन्दू और मुस्लिम एकता के माध्यम से देश में सौहार्द स्थापित करने का आकर्षक प्रयत्न किया गया है, वहीं जनहित और लोककल्याण के माध्यम से परम उत्कर्ष राष्ट्रीय भाव सामने आया है। इसलिए इसे सांस्कृतिक पुनर्जागरण से समन्वित राष्ट्रीय काव्य मान सकते हैं।

मुख्यबिंदु– मध्यकाल, हिंदी साहित्य, राष्ट्र, चेतना, प्रेम, सामाजिक अवदान ।

हिन्दी साहित्य का भक्तिकाल सं. 1375 से 1700 तक के समय में फैला हुआ है। इस युग में देश की राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक परिस्थितियों में पर्याप्त परिवर्तन दिखाई देता है। हिन्दी साहित्य का मध्ययुग संघर्ष से निवृत्ति का समय है। मध्यकाल में मुसलमानों के विदेशी आक्रमणों के सामने भारतवर्ष के हिन्दु राजा सब कुछ लूटा चुके थे। राज्य की प्रजा भी पस्त हिम्मत एवं हताश थी। समाज में अराजकता एवं सभी दिशाओं में मानो अंधकार का साम्राज्य था। हिन्दुओं के मंदिरों को एवं धार्मिक स्थानों को नष्ट कर मुसलमान उनमें हताशा का वातावरण प्रस्थापित कर चुके थे। विदेशी आक्रमणकारियों के संहारक स्वरूप से त्रस्त एवं खंडित भारतीय हिन्दु संस्कृति विवश-सी जान पड़ती थी। ऐसी दशा में राष्ट्रीय चेतना का स्वरूप परिवर्तित होते हुए सांस्कृतिक चेतना में विलीन हो जाय तो कोई आश्चर्य नहीं होगा। आदिकाल में यह राष्ट्रीय चेतना संकुचित रूप में उभरी और भक्तिकाल में आते-आते आपसी ईर्ष्या-द्वेष के कारण कुंठित भी हो गई। अतः इसी राष्ट्रीय चेतना की पुनः जागृति के लिए भारतीय संतों ने तथा कवियों ने खंडित संस्कृति को सिंचित करते हुए सांस्कृतिक पुनरूत्थान के माध्यम से उसमें फिर से प्राण फूंकने का प्रशंसनीय कार्य किया है।

राष्ट्रीय चेतना की जागृति के लिए सांस्कृतिक पुनरूत्थान के माध्यम से भी समाज का पुनरूत्थान करना अनिवार्य था। समाज में अराजकता एवं अंधकार का साम्राज्य छाया हुआ था। सामाजिक भेद-भाव, ऊँच-नीच, वर्णव्यवस्था, धार्मिक पाखण्ड तथा तंत्र-मंत्र का ज़ोर था। ऐसी दशा में भारतीय संस्कृति को सिंचित करने हेतु एक ऐसे संत का प्रादुर्भाव हुआ, जिसने अपनी प्रबल किन्तु सरल और सुबोध विचार-धारा के द्वारा विशेषकर हिन्दु-मुस्लिम एकता के सम्बन्ध में प्रशंसनीय कार्य किया। इस समाजोद्धारक का नाम था, संत कबीर।कबीरदास का प्रादुर्भाव ऐसे समय में हुआ, जब भारतीय संस्कृति का ह्रास हो रहा था, और समाज पतन की गर्ता में डूब रहा था। संत कबीरदास ने जाति पांति के भेदभाव, वर्णव्यवस्थाओं, धार्मिक पाखण्ड, आदि का कट्टर विरोध किया तथा भारतीय जनता में अपनी दार्शनिक एवं आध्यात्मिक विचारधारा के बल पर भारतीय संस्कृति का पुनरूत्थान कर राष्ट्रीय चेतना को जागृत करने का वंदनीय प्रयास किया। अपनी 'पंचमेल खिचड़ी या 'सधुक्कडी' सरल एवं सुबोध भाषा में राष्ट्रीय चेतनार्थ सतत प्रयत्नशील संत कबीरदास भक्तिकाल के प्रथम नेता माने जायेंगे।

निर्गुण काव्य-धारा की प्रथम ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रवर्तक एवं प्रमुख कवि कबीर हैं तो प्रेमाश्रयी शाखा के प्रमुख कवि मलिक मोहम्मद जायसी है। मध्ययुग में हिंदु और मुसलमान जातियों के मानस बिलकुल शुष्क हो चुके थे। इस काल की स्निग्धता विहिन मानस में सूफी कवियों ने प्रेम जैसे शाश्वत विषय के माध्यम से रागात्मक अनुभूतियों को जगाने का कार्य किया। सूफी कवि जाति से मुसलमान थे, फिर भी उन्होंने अपनी कविता का माध्यम हिन्दु प्रेम कहानियों को बनाया, जिससे हिन्दु-मुसलमानों को एकसूत्रता में बाँधने में सहायता मिली। उन्होंने अपनी कविता में प्रेम की पीर की धारा प्रवाहित की, जिसके प्रेम-स्निग्ध प्रवाहों से दोनों जातियों में सामंजस्य की भावना उत्पन्न हुई। सूफी कवियों के काव्य का मूल उद्देश्य हिन्दु-मुस्लिम एकता स्थापित कर समाज में सौहार्द का वातावरण खड़ा करना था, जिसमें वे प्रायः सफल भी हुए थे। इन

कवियों में जायसी के उपरांत कुतुबन, मंझन, उसमान, नूर मुहम्मद आदि अनेक कवियों के नाम लिये जा सकते हैं। इन सभी सूफी कवियों में मलिक मोहम्मद जायसी का नाम सर्वोपरि ही माना जायेगा, जिनका प्रमुख ग्रंथ है पद्मावत ।

मलिक मुहम्मद जायसी सूफी कवि थे, जिन्होंने प्रेम को अपनी कविता का माध्यम बनाया। उनका लक्ष्य था, मनुष्य को एक ऐसी भूमि पर अवस्थित करना, जहाँ धर्म, जाति-पाँति, धार्मिक पाखण्ड जैसे बंधन न हो। यहाँ उन्होंने हिन्दु-मुस्लिम ऐक्य का आह्वान कर देश में राष्ट्रीय ऐक्य का वातावरण निर्माण करने में अपना महत्वपूर्ण योग दिया। इस प्रकार निर्गुण काव्यधारा के कवियों ने समाज के कुरिवाजों एवं धार्मिक पाखण्डों का विरोध कर जाति-पाति के भेदभावों को भी विलुप्त किया। इस सम्बन्ध में आचार्य नगेन्द्र कहते हैं "निर्गुण भक्ति का चतुर्थ एवं सब से महत्वपूर्ण तत्त्व है मानव को एक ऐसे विश्व-व्यापी धर्म के सूत्रों में निबद्ध करना जहाँ जाति, वर्ग और वर्ण-सम्बन्धी भेद न हो। साधना का यह मार्ग सबके लिए उन्मुक्त था। इस क्षेत्र में हिन्दू-मुसलमान का भेद भी विलुप्त हो गया और भक्ति के क्षेत्र में सब समान प्रमाणित हुए।"[1] इस प्रकार निर्गुण भक्तकवियों की वाणी राष्ट्र के लिए वरदान सिद्ध हुई। अतः ये कवि भी राष्ट्रीय चेतना के गायक कहे जा सकते हैं।

भक्तिकाल की दूसरी महत्वपूर्ण काव्यधारा है सगुण-भक्ति काव्यधारा, जिसमें दो प्रमुख शाखाएँ हैं-1) कृष्णभक्ति शाखा 2) रामभक्ति शाखा । कृष्णभक्ति शाखा में अष्टछाप के कवि अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं, जिनमें कविवर सूरदास सर्वोपरि हैं। सूरदास का समय मानवता का ह्रास एवं घोर निराशा का युग था ।ऐसी निराश जीवन की निराश आत्मा में कृष्णप्रेम तथा वात्सल्यपूर्ण भक्ति के सहारे आशा का संचार किया, भक्ति के क्षेत्र में फैले बह्याड़म्बर एवं जाति-भेद जैसी समस्याओं को तिरस्कृत किया। उन्होंने कृष्ण-प्रेम एवं वात्सल्य से मानव को समान भूमि पर अवेष्ठित किया। इस प्रकार विभिन्न मत-मतांतरों एवं जाति पाँति के संघर्षों में विभक्त भारतीय हिन्दु जनता के हृदय में कृष्ण-प्रेम का दीपक जलाकर उनमें एकता के वातावरण का संचार किया।

सूरदास ने कृष्ण-चरित के माध्यम से श्रीकृष्ण को जन-नायक का रूप भी दिया है। श्रीकृष्ण को अपनी जन्मभूमि से अधिक कोई स्थल नहीं भाता। ब्रज की रज को अधिक महत्व देते हुए श्रीकृष्ण कहते भी हैं कि ' ऊधो मोही ब्रज बिसरत नाहिं।' इस प्रकार सूरदास ने अपने नायक श्रीकृष्ण में अपनी मातृभूमि के प्रति प्रेम एवं निष्ठा दिखाकर राष्ट्रीय चेतना को उजागर करने में अपना महत्वपूर्ण योग दिया है। अंततः कहा जा सकता है कि सूरदास के स्थूल चक्षु भले ही बंद हो, किन्तु राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना के सहस्त्र मनःचक्षु उनके हृदय में जगमगा रहे थे, इसमें कोई सन्देह नहीं।

सगुण काव्यधारा की दूसरी महत्वपूर्ण शाखा है रामभक्ति शाखा, जिसके प्रमुख प्रवर्तक श्री राम के परम भक्त, समन्वयवादी संत एवं लोकनायक कविकुल शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदास हैं। गोस्वामी तुलसीदास का प्रादुर्भाव एक ऐसे युग में हुआ,जब सांस्कृतिक अस्मिता बिलकुल नष्टप्रायः हो चुकी थी। ऐसे अंधकार युग में तुलसीदास ने निराश भारतीय हिन्दु जनता में राष्ट्रीय बीज का आरोपण किया, जो आज वर्तमान युग में विशाल वृक्ष के रूप में हमारे सामने प्रस्तुत है। 'रामचरितमानस' तुलसीदास का प्रमुख ग्रंथ है, जो भारतीय संस्कृति की अमूल्य निधि माना जाता है। गोस्वामी तुलसीदास ने 'रामचरितमानस' का सर्जन कर उसके पदों को भारतवर्ष के घर-घर में गूंजायमान कर दिये। यह ग्रंथ बाद में इतना प्रचलित हुआ कि उसे 'तुलसी रामायण' की संज्ञा से अभिहित किया गया। ह्रासोन्मुख परिस्थिति एवं निराशा के अंधकार में भटकी हुई हिन्दु प्रजा के मन में 'रामचरितमानस' ने श्रीराम में आस्था एवं श्रद्धा के बीज का वपन किया। इस प्रकार गोस्वामी तुलसीदास ने सांस्कृतिक राष्ट्रीय चेतना के उत्थान हेतु 'रामचरितमानस' ग्रंथ का निर्माण कर देश में राम-राज्य स्थापित करने में अपना महत्वपूर्ण योग दिया है।

तुलसीदास की दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता है. उनकी लोकमंगल की भावना एवं समन्वयवादी विचारधारा। तत्कालीन समाज जाति-पाँति या वर्णाश्रम जैसे भेदभावों एवं विभिन्न मत-मतांतरों से लिप्त था। ऐसी विभक्त समाजव्यवस्था में एकता की आवश्यकता थी। तुलसीदास ने अपने साहित्य-सर्जन द्वारा समन्वयवादी दृष्टिकोण को

अपनाकर सामाजिक ऐक्य को बनाये रखने में प्रशंसनीय कार्य किया। उन्होंने ज्ञान तथा भक्ति का समन्वय किया, शैव एवं वैष्णवों का भी समन्वय कर सांस्कृतिक ऐक्य का वंदनीय प्रयास किया। गोस्वामी तुलसीदास ने श्रीराम के मर्यादापुरुषोत्तम स्वरूप को चित्रित कर आदर्श पुरुष, आदर्श परिवार, आदर्श राजा, आदर्श प्रजा वं आदर्श राष्ट्र तक कि परिकल्पनाओं को साकार रूप देकर देश की जनता को एक नई दिशा एवं दृष्टि से अवगत कराया। इसके अतिरिक्त राजनीतिक दृष्टि से भी तुलसीदास का योगदान महत्वपूर्ण सिद्ध होता है। उस समय की जनता के समक्ष 'पराधिन सपनेहूँ सुख नाहिं' कहकर राजनीतिक पराधिनता की ओर राष्ट्र की जनता का ध्यान आकृष्ट किया । रावण के वध का प्रसंग निरूपित कर तुलसी ने राष्ट्र पर विदेशी आक्रमणकारियों के सामने संघर्ष करने का अमर संदेश राष्ट्र की जनता को घर-घर में पहुँचाया। उनके राम भी आततायी रावण को मारकर राष्ट्र को स्वतंत्रता प्रदान करते हैं। श्रीराम के लोकनायक एवं लोकमंगलकारी आदर्श रूप के माध्यम से मध्ययुगीन अराजकतापूर्ण राजनीतिक परिवेश में भी रामराज्य की कल्पना को साकार रूप देने में तुलसीदास संपूर्णतः सफल दिखाई देते हैं।

राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक के मन में अपनी मातृभूमि के लिए प्रेम एवं श्रद्धा का अहोभाव होना अत्यंत आवश्यक है, यह बात तुलसी कैसे भूल सकते हैं! 'रामचरितमानस' में तुलसी ने श्रीराम का अपनी अयोध्या मातृभूमि से असीम प्रेम दर्शाया है और मातृभूमि के प्रति अपना कर्तव्य स्पष्ट किया है. वे कहते हैं-

"जदपि सब वैकुण्ठ बखाना ।। वेद पुरान विदित जगु जाना ।।
अवधपुरी सम प्रिय नहीं सोऊ।। यह प्रसंग जाने कोऊ कोऊ ।।"[2]

इस प्रकार गोस्वामी तुलसीदास ने रामकाव्य के माध्यम से उस समय की जनता में आस्था एवं राष्ट्रीयता के स्वर फूंकने का कार्य किया। "विदेशी शक्तियों से आक्रान्त, सामाजिक दृष्टि से वैषम्यपीड़ित, धार्मिक धरातल पर सिद्धों एवं तांत्रिकों के विविध मत-मतांतरों से ग्रस्त नैराश्ययुक्त हिन्दु जनता को राम के असुर संहारक, शरणागत प्रति पालक अलौकिक रूप ने मधुमय सम्बल प्रदान किया।"[3]

निष्कर्ष – रूप में कहा जा सकता है कि मध्ययुग में राजनीतिक चेतना के अंतर्गत राष्ट्रीय विचारों को प्रवाहित करने का सब से बड़ा श्रेय गोस्वामी तुलसीदास को है, जो हिन्दी साहित्य के मध्ययुग में अद्वितीय है।हिन्दी साहित्य का मध्यकाल विदेशी आक्रमणों का शिकार था। इस काल में विदेशी आक्रमणकारियों द्वारा केवल राजनीतिक, बल्कि सांस्कृतिक आक्रमण भी किया गया। ऐसे भयावह वातावरण से देश की जनता निराशा के गहरे गर्त में डूब चुकी थी। अतः उसमें विदेशी शासन के प्रति विरोध का आक्रोश कही पर भी दिखाई नहीं देता। ऐसे समय में कबीर, जायसी, तुलसी, सूर आदि कवियों की अलौकिक एवं दिव्य वाणी से लौकिक जीवन शांतिप्रिय अवश्य बना, लेकिन उनकी वाणी विदेशी शासन के प्रति स्वतंत्रता पाने के लिए देश की जनता में आक्रोश नहीं जगा सकी। इसलिए कई विद्वान हिन्दी साहित्य के मध्यकाल में सांस्कृतिक पुनरूत्थान होने की बात का समर्थन तो करते हैं, लेकिन राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति को न के बराबर ही समझते हैं। "सांस्कृतिक आक्रमण के विरोध का भाव उक्त काव्य में उभरा और उसने भक्ति के प्रचार के माध्यम से सांस्कृतिक पुनरूत्थान की ओर अभियान किया। राजनीतिक अभ्युत्थान की चर्चा उस समय नहीं की जा सकती थी, क्योंकि देश कमज़ोर था और मुस्लिम सेना के विरोध की शक्ति उसके पास नहीं थी।"[4] इस प्रकार भक्तिकाल में भक्ति के माध्यम से देश की जनता में सांस्कृतिक पुनरूत्थान तो हुआ लेकिन राष्ट्रीय चेतनार्थ किसी भी प्रकार का कोई जन-आंदोलन दृष्टिगत नहीं होता । उपर्युक्त वास्तविकताओं के बावजूद भी ऐसा कहना असमीचीन ही होगा कि राष्ट्रीय चेतना के सन्दर्भ में भक्तिकाल में किसी भी प्रकार का प्रयत्न नहीं हुआ। मध्यकाल के कवियों ने राष्ट्रीय चेतनार्थ सब से बड़ा कोई कार्य किया हो, तो वह था हिन्दु-मुस्लिम ऐक्य के माध्यम से सामाजिक सौहार्द का वातावरण खड़ा करना। उन्होंने सांस्कृतिक पुनरूत्थान के जरिये देश के खोये हुए गौरव को पुनःस्थापित करने का वंदनीय प्रयास किया। मध्यकालीन कवियों ने देश के जन-जन में सांस्कृतिक जागरण का शंख फूंका। "व्यक्ति-व्यक्ति के विकास से राष्ट्र का विकास होता है, तो जन-जागरण में राष्ट्र के जनमानस में

जागरण होना स्वाभाविक है।"[5] आगे भी मध्यकालीन हिंदी कविता की इस संदर्भ में स्वीकृति स्पष्ट करते हुए डॉ. नरेश मिश्र लिखते हैं "निश्चय ही भक्तिकाल में जहाँ हिन्दू और मुस्लिम एकता के माध्यम से देश में सौहार्द स्थापित करने का आकर्षक प्रयत्न किया गया है, वहीं जनहित और लोककल्याण के माध्यम से परम उत्कर्ष राष्ट्रीय भाव सामने आया है। इसलिए इसे सांस्कृतिक पुनर्जागरण से समन्वित राष्ट्रीय काव्य मान सकते हैं। "[6] अंततः इतना अवश्य कहा जा सकता है कि आधुनिक संकल्पना के अनुसार भक्तिकाल में भले ही राष्ट्रीय चेतना का संकुचित स्वरूप मिलता हो, लेकिन एक दृष्टि से सांस्कृतिक चेतना के रूप में यह एक राष्ट्र-प्रेम की भावना ही थी. क्योंकि खोई हुई राष्ट्रीयता को खोजने का यह एक प्रामाणिक प्रयास था, यह निर्विवाद सत्य है।

सन्दर्भ सूची –

1. डॉ. नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. 139
2. गोस्वामी तुलसीदास, रामचरितमानस, उत्तरकांड : ३-३
3. डॉ. नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. 201
4. डॉ. जितराम पाठक, आधुनिक हिन्दी काव्य में राष्ट्रीय चेतना का विकास, पृ. 45
5. डॉ. नरेश मिश्र (सं.), आधुनिक हिन्दी राष्ट्रीय काव्यधारा राष्ट्रीयता और मानवतावाद, पृ. 18
6. वही, पृ. 18-19